आदिवासी जीवन केन्द्रित हिन्दी उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन

ADIVASI JIVAN KENDRIT HINDI UPANYASON KA ALOCHNATMAK ADHYAYAN

(CRITICAL STUDIES OF TRIBAL LIFE CENTRIC HINDI NOVELS)

Thesis Submitted for the partial fulfilment of the requirements for the Degree Doctor of Philosophy in Arts

By

NIDHI KUMARI GUPTA

हिन्दी विभाग

मानविकी और सामाजिक विज्ञान संकाय

प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय, कोलकाता

पश्चिम बंगाल, भारत

दिसम्बर: 2022

आदिवासी जीवन केन्द्रित हिन्दी उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन

ADIVASI JIVAN KENDRIT HINDI UPANYASON KA ALOCHNATMAK ADHYAYAN

(CRITICAL STUDIES OF TRIBAL LIFE CENTRIC HINDI NOVELS)

Thesis Submitted for the partial fulfilment of the requirements for the Degree Doctor of Philosophy in Arts

By

NIDHI KUMARI GUPTA

Under the supervision of

DR. MARY HANSDA

DEPARTMENT OF HINDI

FACULTY OF HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCES

PRESIDENCY UNIVERSITY

KOLKATA, INDIA

DECEMBER: 2022

PRESIDENCY UNIVERSITY
KOLKATA

Presidency University

Hindoo College (1817-1855), Presidency College (1855-2010)

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि निधि कुमारी गुप्ता, शोधार्थी, हिन्दी विभाग, प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय, कोलकाता ने अपना शोध-प्रबंध **"आदिवासी जीवन केन्द्रित हिन्दी उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन"** मेरे पर्यवेक्षण एवं निर्देशन में इस विश्वविद्यालय की पी-एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध शोधार्थी के मौलिक एवं स्वतंत्र कार्य का परिणाम है। मेरे संज्ञान में इस अनुसंधान-सामग्री का उपयोग आंशिक या पूर्णरूप से अन्यत्र शोध की उपाधि हेतु नहीं किया गया है।

Certificate

This is to certify that the thesis entitled **"आदिवासी जीवन केन्द्रित हिन्दी उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन ADIVASI JIVAN KENDRIT HINDI UPANYASON KA ALOCHNATMAK ADHYAYAN"** submitted by Smt. NIDHI KUMARI GUPTA, who got her name registered for PhD Programme under my supervision (Registration Number R-17RS01270086, 9th July 2018) and that neither her thesis nor any part of the thesis has been submitted for any degree/diploma or any other academic award anywhere before.

Signature of the Supervisor(s) with date and official stamp

Dr. Mary Hansda
Assistant Professor
Department of Hindi
Presidency University, Kol-73

27.12.2022

Research Supervisor/शोध निर्देशक
Dr. Mary Hansda/डॉ. मेरी हाँसदा
Assistant Professor (Hindi Department)/सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग)
Presidency University, Kolkata/प्रेसीडेंसी विश्वविद्यालय, कोलकाता

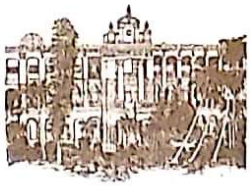

86/1, College Street, Kolkata - 700 073, Phone : (033) 2241 1960, Fax : (033) 2241 2738

उपसंहार

उपसंहार

पूँजीवादी भूमंडलीकरण के विस्तार के साथ हाशिये का साहित्य मुख्य रूप से केंद्र में आने लगा है जिसमें आदिवासी साहित्य प्रमुख है। बुद्धिजीवियों के चिंतन के केंद्र में आदिवासी साहित्य के आने के कई कारण हैं। आदिवासी साहित्य की मुख्य चिंता आदिवासियों के जल, जंगल, जमीन, भाषा और संस्कृति की रक्षा से संबंधित है। वास्तव में ये उनके अस्तित्व का प्रश्न भी है। प्रकृति के साथ उनका प्रगाढ़ संबंध रहा है, वे प्रकृति की छत्रछाया में रहते हैं और उसके साथ साहचर्य का संबंध स्थापित करते हुए उसकी रक्षा करते हैं। लेकिन मनुष्य के अतिरिक्त संचय करने की प्रवृत्ति और भौतिक सुख-सुविधाओं की लालसा के कारण प्रकृति का लगातार दोहन हो रहा है जिससे प्रकृति के अस्तित्व का खतरा लगातार बढ़ता जा रहा है। प्रकृति पर खतरा सम्पूर्ण जीव-जगत के अस्तित्व का संकट है जो आदिवासी साहित्य की रचना का बीज बिन्दु है। इस प्रकार आदिवासी साहित्य न सिर्फ मानव जाति बल्कि सम्पूर्ण प्रकृति और जीव-जगत की रक्षा का साहित्य है।

शोध करने के दौरान विकास के संबंध में दो विरोधी अवधारणा सामने आई। एक की दृष्टि में जिसे विकास कहा जाता है, दूसरे की दृष्टि में वह विस्थापन का दंश है। देश के प्रथम प्रधानमंत्री विकास का अर्थ औद्योगीकरण की उन्नति मानते थे। इसलिए उन्होंने देश की आर्थिक स्थिति में सुधार, लोगों के जीवन स्तर में बदलाव और देश की गरीबी तथा अशिक्षा से निजात पाने के लिए विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों की स्थापना की। इन औद्योगिक केन्द्रों के सहारे विकास के नाम पर प्रकृति प्रदत्त जीवन जीने के मूल संसाधनों को बाजार भाव से बेचा जाने लगा। औद्योगीकरण का प्रथम प्रभाव शहरीकरण है। शहर की चकाचौंध रोशनी में पल-बढ़ रही उपभोक्तावादी संस्कृति को विकास का मॉडल मान लिया गया। दूसरी ओर विस्थापन ने खास कर आदिवासी समुदाय की संस्कृति, स्वायत्तता एवं अस्तित्व को ही दफनाने का प्रयास किया है। जमीन से बेदखल होकर वे बेरोजगारी का दंश झेलते सेवा-कार्यों में लगा दिये गए। वे कृषक से नौकर बन गए हैं। आज वे बड़े लोगों का खाना बनाना, कपड़े धोना,

पानी पिलाना, चाय बनाना आदि को नौकरी समझने लगे हैं। वास्तव में औद्योगीकरण पर आधारित विकास समाजीकरण के लक्ष्य से कोसों दूर है। अतः मानव मात्र के लिए यह विकास का मॉडल चिंता का विषय है। किसी भी देश को समृद्ध बनाने के लिये विकास का होना अत्यंत आवश्यक है। इसके अंतर्गत उद्योगों की स्थापना, तकनीकी प्रगति, पूँजी में वृद्धि आदि को प्रश्रय दिया जाता है। ये सभी विकास के आधारभूत तत्व हैं और निस्संदेह इसने विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, किन्तु इसे ही वास्तविक विकास मान लेना उचित नहीं है, विकास की अवधारणा इससे भी व्यापक है। आर्थिक विकास अंतिम लक्ष्य नहीं है, बल्कि साधारण जन के जीवन स्तर को उठाने का महत्वपूर्ण साधन है। वास्तव में विकास का अर्थ है स्व का विकास अर्थात् इच्छा के अनुसार जीवनयापन करना। देश में औद्योगिकीकरण के साथ-साथ शहरीकरण भी हुआ। आदिवासी क्षेत्र औद्योगिक विकास से सबसे अधिक प्रभावित हुआ क्योंकि आदिवासी क्षेत्र (जंगल) में खनिज संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। यही कारण है कि सभी बड़ी-बड़ी परियोजनाएँ आदिवासी इलाकों में ही बनीं और बनकर बंद होने के कगार पर आ गई। बांध परियोजना के अंतर्गत कई बांध प्रोजेक्ट आदिवासी क्षेत्रों में स्थापित हुए। किन्तु यह 'विकास का मंदिर' न बनकर 'विनाश का मंदिर' साबित हुआ। आदिवासियों को अपनी ही जमीन से विस्थापित होना पड़ा और अपने सघन वनाच्छादित प्रदेशों से निकलकर पुनर्वास के लिये इधर-उधर भटकना पड़ा। उनकी समस्या मात्र अर्थ से संबंधित नहीं है, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक प्रश्न भी अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, आर्थिक विकास आदि से संबंधित योजनाओं का आकलन करने से साफ तौर पर साबित हो रहा है कि आजादी के सत्तर वर्षों बाद भी आदिवासी विकास के लक्ष्य से काफी दूर है। एक ओर संवैधानिक सुरक्षा के प्रावधान दूसरी ओर विकास की नीतियां, बड़ी परियोजनाएं, करोड़ों रुपयों की राशि का व्यय इसके बावजूद आदिवासी जनसंख्या में निरंतर आ रही गिरावट गंभीर चिंता का विषय है। हिन्दी के आदिवासी उपन्यासों में विस्तार से इसकी चर्चा मिलती है।

आदिवासी समाज सामूहिक समाज का ज्वलंत उदाहरण पेश करते हैं। उनका यह दृष्टिकोण मनुष्यता को दृढ़ और शक्तिशाली बनाता है। उन्होंने बाहरी दुनिया से भिन्न अपना एक संसार निर्मित किया है जहाँ सभी सामाजिक नियमों का पालन करते हुए सामूहिक रूप से निवास करते हैं और आनंद से जीवन व्यतीत करते हैं। प्रकृति मानव जीवन के कण-कण में व्याप्त है। प्राकृतिक सुंदरता अनोखी, निराली, आकर्षक और मनमोहक होती है तथा आदिवासी समाज की सुंदरता प्रकृति की ही देन है। प्रकृति इन्हें विरासत में मिली है और ये प्रकृति के संरक्षक रहे हैं। आदिवासी समाज के निर्माण में प्रकृति का महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है। वास्तव में इनकी नीति विश्व मानवता को बचाने की नीति है, प्रकृति को बचाने की नीति है जो आज के संदर्भ में उपयोगी एवं सार्थक सिद्ध होगा। वस्तुतः आदिवासियों ने इसका कभी निजीकरण नहीं किया। आदिवासी समाज समतावादी समाज रहा है जहाँ स्त्री और पुरुष दोनों को समान रूप से देखा जाता था। पुरुष के प्रति जो दृष्टि, जो भाव रखा जाता था, स्त्री के प्रति भी वही रवैया अपनाया जाता था। दोनों की सहभागिता पर दृष्टिपात करते हुए स्त्रियों के प्रति हिंसा एवं घृणा की भावना आदिवासी समाज में विद्यमान नहीं था। आदिवासी समाज स्त्रियों को भी पुरुष के समतुल्य समझता था। वह स्वयं निर्णय लेने में समर्थ थी। अंग्रेजी सरकार द्वारा भूमि पर सामूहिक अधिकार समाप्त कर दिये गए और भूमि पर व्यक्तिगत अधिकार को ज्यादा महत्त्व दिया गया जिसके कारण स्त्रियों के अधिकार छीनते नजर आने लगे। आज के संदर्भ में स्त्रियों का महत्त्व केवल इस बात में है कि वह परिवार का भरण-पोषण करे। स्त्रियों पर नियंत्रण रखने की सामंतवादी सोच ने आदिवासियों की समृद्ध सामाजिक संरचना को विकृत कर दिया है और स्त्रियाँ हाशिये पर चली गईं। जब-जब व्यवस्था बदली है, आदिवासी समाज प्रभावित हुआ है। अंग्रेजों के द्वारा शासन व्यवस्था स्थापित हो जाने के बाद इनके समाज में आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन आया। इनके संपर्क में गैर आदिवासी समाज आया और भूमि सम्बन्धी कानून, स्त्रियों से संबंधित नजरिया, उनकी स्वच्छंदता प्रभावित हुई। सबसे अधिक स्त्रियाँ प्रभावित हुईं क्योंकि अन्य समाज में स्त्रियों को देखने की दृष्टि आदिवासी समाज से भिन्न

है। उनकी सामूहिकता नष्ट हुई। पुरुष स्वयं को उच्च मानकर स्त्रियों को दोयम दर्जे का मानने लगे। सामाजिक मूल्य समाज को एकजुट करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आदिवासियों का जीवन मूल्य ही उनकी पहचान है, उनका अस्तित्व सामाजिक मूल्य से अविच्छिन्न रूप से जुड़ा है।

राजनीतिक दृष्टि से आदिवासियों की स्वायत्त शासन व्यवस्था रही है। आदिवासी समाज के अंतर्गत कई समुदाय हैं जैसे - संथाल, हो, खड़िया, मुंडा, कोल्हन आदि और इनकी अपनी परंपरागत स्वशासन प्रणाली रही है। प्रत्येक समुदाय की स्वशासन प्रणाली में ये पाँच तत्व पाये जाते हैं- सहजीविता, सहअस्तित्व, समानता, सहभागिता और सामुदायिकता। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन ने जमींदारी प्रथा को जन्म दिया और आदिवासियों का शोषण किया। यही कारण है कि आदिवासियों ने बाहरी लोगों के प्रवेश को रोकने का हरसंभव प्रयास किया और अपनी स्वायत्त व्यवस्था को बचाने के लिए संघर्ष किया। 5वीं-6ठी अनुसूची की अवधारणा ब्रिटिश काल के समय से सन् 1874 में ही निर्मित हो चुकी थी तथा प्रत्येक अधिनियमों में से एक अधिनियम के रूप में अस्तित्व के रूप में उपस्थित था जिसके लिए आदिवासियों को अंग्रेजों से लंबा संघर्ष करना पड़ा था। अपने पैतृक क्षेत्र एवं अपने समुदाय की स्वतन्त्रता, अपने क्षेत्र की शक्ति बनाए रखने के लिए आदिवासियों ने परंपरागत रूप से तीर-धनुष, टाँगी, कुल्हाड़ी से अत्याधुनिक हथियारों से लैस सेना से युद्ध किया। अंग्रेजी सत्ता को उनसे समझौता करने के लिए मजबूर होना पड़ा। 1919 और 1935 का इंडिया एक्ट स्वशासन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। आजाद भारत में भी स्वशासन की व्यवस्था कुछ परिवर्तन के साथ बरकरार रही। तिलका मांझी, सिदो, कान्हू, चाँद, भैरव, सोबरन मांझी, गोविंद गिरि आदि युग द्रष्टा आंदोलनकारियों ने आदिवासी राष्ट्रीयता की भावना और जल, जंगल, जमीन, हासा-भाषा पर मालिकाना हक के सपने लेकर आंदोलन किया था और संघर्ष को एक मुकाम तक पहुंचाया। इन्होंने आदिवासियों की संस्कृति, जीवन दर्शन की रक्षा के लिए विरोधी शक्तियों से विद्रोह किया। किन्तु आजादी के बाद नेतृत्व का प्रश्न और उसका उद्देश्य नेतृत्वकर्ता की दृष्टि में बदल गया। नेतृत्वकर्ता

धड़ल्ले से लूट के खेल में शामिल हो रहा है। आदिवासी उपन्यासों में आदिवासी क्षेत्र में आदिवासियों और गैर आदिवासी राजनीतिज्ञों के साथ-साथ कार्य करने की प्रणाली को भी दर्शाया गया है। किन्तु राष्ट्र स्तर पर पहुँचते-पहुँचते नेतृत्व करने की अंदरूनी शक्ति ही समाप्त होने लगती है। कारणों का खुलासा करने के दौरान देश की राजनीतिक खोखलापन का पर्दाफाश हुआ है।

कहा जाता है कि आदिवासियों का अपना कोई धर्म नहीं है, किन्तु यह सत्य नहीं है। उनका अपना धर्म है, लेकिन धर्म की अवधारणा अन्य धर्मों से भिन्न है। इनके देवता बोंगा कहलाते हैं जिसमें प्रकृति के समस्त अवयव तथा उनके पूर्वज भी शामिल हैं। आदिवासी धर्म में अवतारवाद का कोई स्थान नहीं है। इसलिए बोंगा का अवतार ग्रहण करने की धारणा इस समाज में व्याप्त ही नहीं है, वह एक प्रेरक शक्ति के रूप में कार्य करता है जो अन्य धर्मों से भिन्न बनाता है। इनकी धार्मिक मान्यता के अनुसार प्रकृति समस्त प्राणी जगत का मार्ग दर्शन करती है। स्वर्ग-नरक, पाप-पुण्य जैसी अवधारणा आदिवासी धर्म का हिस्सा नहीं है। उनका पुरखा साहित्य इतना समृद्ध और विशाल रहा है कि उसके आधार पर आदिवासी समाज और संस्कृति आज भी जीवित रही है। आदिवासी समाज पवित्र ग्रन्थों द्वारा संचालित नहीं होता है। धर्म का सहज और बंधनमुक्त रूप अन्य धर्मों की तुलना में विशिष्ट बनाता है। धर्म और समाज का गहरा संबंध रहा है। धर्म के बिना समाज की परिकल्पना नहीं की जा सकती है। लेकिन आदिवासी समाज में धर्म का हस्तक्षेप अन्य धर्मों से भिन्न रूप में देखा जा सकता है। आदिवासी धर्म द्वारा संचालित नहीं होता है। किसी मनुष्य को उन्होंने ईश्वर का स्थान नहीं दिया है। आदिवासियों के समस्त अनुष्ठानों में उनका जीवन दर्शन और जीवन मूल्य विद्यमान रहता है जिसकी नियंत्रणकारी भूमिका नहीं होती है। पाहन-पुजारियों का समाज में हस्तक्षेप नहीं है, वे अन्य लोगों जैसा ही सामान्य जीवन व्यतीत करते हैं। आज धर्म का व्यापार बड़ी तेजी से हो रहा है जिसमें केवल आडंबर एवं कर्मकांड का महत्त्व है। आदिवासी धर्म इन सबसे बिलकुल परे सहज और लचीला है। उनकी इस सहजता का लाभ उठाकर ईसाई मिशनरियों ने

स्वतन्त्रता पूर्व बड़े पैमाने पर धर्मांतरण कराया। धर्मांतरण के साथ-साथ शिक्षा का प्रसार भी हुआ। एक तरह का टकराव दो भिन्न समुदायों में देखा गया। ईसाई बनने के बाद भी आदिवासियों के प्रति दृष्टिकोण नहीं बदला। यद्यपि ईसाई मिशनरियों की मंशा उपनिवेशवादी विचारधारा से ग्रसित थी, किन्तु उन्होंने आदिवासियों से सहानुभूति रखा जिसे आदिवासी देख, सोच और समझ रहे थे।

आदिवासी संस्कृति की विशेषता यह है कि आदिवासी पूरे समुदाय को लेकर चलता है और उनकी खुशहाली और समृद्धि की कामना करता है। आदिवासी सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में उनके पूर्वजों और समस्त प्राणी जगत के योगदानों को स्मरण रखते हैं और विभिन्न अवसरों पर उनके प्रति आभार प्रकट करते हैं तथा उनसे अच्छी फसल, अच्छा स्वास्थ्य, हरियाली और समृद्धि की प्रार्थना करते हैं। आदिवासियों ने अपनी संस्कृति का निर्माण प्रकृति के संपर्क में ही रहकर किया है। इस समाज की संस्कृति के साथ प्रकृति रची-बसी हुई है। जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कार प्रकृति से ही संबंधित है। नामकरण संस्कार, विवाह संस्कार, विवाह-विच्छेद (तलाक), मृत्यु से संबंधित संस्कार, पर्व-त्योहार आदि प्रकृति पर ही आधारित है। करम पर्व, सरहुल पर्व, सोहराय आदि पर्वों के केंद्र में प्रकृति है। वस्तुतः आदिवासी संस्कृति और प्रकृति का गहरा और आत्मीय संबंध रहा है। प्रकृति से विलग आदिवासी समुदाय अस्तित्वहीन है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण है विकास के नाम पर आदिवासियों का विस्थापन। विस्थापित होकर आदिवासी प्रदूषित इलाकों में बसने के लिए विवश हुए जहाँ प्रकृति से दूर-दूर तक नाता नहीं है। प्रकृति से अलग होकर आदिवासी जीवन शैली और संस्कृति प्रभावित हुई। पिछले दो सौ वर्षों से आदिवासी समाज ने बाहरी हस्तक्षेप को झेला है जिसके कारण उनकी परंपरागत सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाएँ टूटी और संस्कृति पर कुठाराघात हुआ। उनमें अपनी संस्कृति के प्रति हीन दृष्टिकोण पनपने लगा। पारंपरिक कृषि व्यवस्था विनष्ट हुई और जीविका के लिए शहर की ओर पलायन हुआ। अब वे सबके सामने अपनी मातृभाषा में बात करने से कतराते हैं। शहर में रहने वाले आदिवासी लोगों के पास अपने पर्वों को मनाने के लिए वक्त

ही नहीं है। पारंपरिक नृत्य एवं गीत-संगीत की परंपरा का स्थान आधुनिक भड़कीले गीतों ने ले लिया है। कुल मिलाकर आदिवासी संस्कृति में जो परिवर्तन परिलक्षित होता है वह बाहरी संस्कृति के प्रभाव का परिणाम है। वर्तमान में आदिवासी संस्कृति को बचाने की पुरजोर कोशिश हो रही है जो सराहनीय है।

भाषा समुदाय के जीवन मूल्यों का सबसे सशक्त प्रतिबिंब होता है। इसलिए एक समाज के जीवन को जब अन्य समाज की भाषा में अभिव्यक्त किया जाता है तो कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। आदिवासी समाज पर साहित्य लिखते समय उनकी मूल सामाजिक प्रवृत्तियों और जीवन मूल्यों का ध्यान रखना आवश्यक होता है। भाषा की शुद्धता यहाँ मायने नहीं रखती न ही साहित्य के सौंदर्यशास्त्र के मापदंड पर आदिवासी साहित्य की शिल्प और भाषा को परखना चाहिए। आदिवासी साहित्य मूलतः आदिवासी साहित्यकार और गैर आदिवासी साहित्यकारों द्वारा लिखा गया है। गैर आदिवासी साहित्यकारों का शिल्प सौन्दर्य अधिक सशक्त और सुंदर है। आदिवासी साहित्यकारों द्वारा लिखित साहित्य की भाषा संरचना, शिल्प-गठन सरल है, किन्तु आदिवासियत की रक्षा इसका मूल उद्देश्य है।

कुल मिलाकर आदिवासी जीवन केन्द्रित हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी जीवन की समग्र अभिव्यक्ति हुई है। आदिवासी उपन्यासों में विभिन्न आदिवासी समुदायों के जीवन और संस्कृति की चर्चा की गई है, भिन्न परिवेश और भिन्न संस्कृति होने के बावजूद उनमें जो तत्त्व निहित हैं वह है - सामूहिकता, सहभागिता, सहजीविता, समानता और सहअस्तित्व। ये ही वे तत्त्व हैं जो उन्हें आदिवासी बनाता है। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि आदिवासियत की रक्षा करना आदिवासी उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है।

सार

आदिवासी साहित्य लेखन दो-तीन दशकों से नहीं, बल्कि लगभग सौ-डेढ़ सौ वर्ष पहले से लिखा जा रहा है। आदिवासी चिंतन का मुख्य पहलू प्रकृति की रक्षा और जीव-जगत के अस्तित्व से संबंधित है। अपनी तीव्र इच्छापूर्ति के कारण मनुष्य ने प्रकृति का अत्यधिक दोहन किया। आदिवासी क्षेत्रों में औद्योगीकरण की प्रक्रिया तीव्र हुई जिससे आदिवासी बड़ी मात्रा में विस्थापन के शिकार हुए और उनके साथ रहने वाले पशु-पक्षी, पेड़-पौधे भी उजाड़े गए। वस्तुतः आदिवासी समाज एक ऐसा समाज है जो मात्र मनुष्य समुदाय के बारे में नहीं सोचता है, बल्कि उसके चिंतन में समस्त प्राणी-जगत (जड़-चेतन) विद्यमान है और उन सबको साथ लेकर चलता है। आदिवासी समुदाय सामुदायिकता, समानता, सहभागिता, सहजीविता और सहअस्तित्व पर मजबूती से विश्वास करता है और ये पाँच तत्व उनके लोकतांत्रिक व्यवस्था के आधारिक स्तम्भ हैं। उनकी स्वतंत्र और स्वशासी लोकतंत्र महज एक व्यवस्था नहीं है, बल्कि एक संस्कृति है। लोकतंत्र की यह संस्कृति भारत के अतिरिक्त विश्व के समस्त आदिवासी समुदायों में देखा जा सकता है जिसकी रक्षा के लिए वे सदियों से संघर्ष कर रहे हैं। यह समस्त संसार प्रकृति द्वारा निर्मित है। प्रकृति के साथ रहकर आदिवासियों ने अनुभव किया कि प्रकृति मनुष्य के बिना जीवित रह सकती है, लेकिन मनुष्य प्रकृति के बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता है। यही कारण है कि आदिवासी जल, जंगल, जमीन से अपना अटूट संबंध मानते हैं और मात्र संबंध नहीं, बल्कि अपना अधिकार मानते हैं। वे आत्मनिर्णय के अधिकारों का दावा करने और अपनी भूमि, संस्कृति तथा पारिस्थितिक तंत्र को बनाए रखने का प्रयास करते हैं जो विश्व के समस्त प्राणी-जगत के लिए अत्यंत आवश्यक है। आदिवासी समुदायों के अधिकारों का सम्मान करना तथा पारंपरिक ज्ञान को केंद्र में रखकर प्रकृति और मनुष्य के बीच संतुलन बनाए रखना आदिवासी साहित्य का उद्देश्य है।

Nidhi kumari Gupta

निधि कुमारी गुप्ता
शोधार्थी